तिथि–10 जून 2020
सृष्टि संवत्- १, ९६, ०८, ५३, १२१
युगाब्द-५१२१, अंक-१२७, वर्ष-१३
आषाढ़ विक्रमी २०७७ (जून 2020)
मुख्य संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य'
कार्यकारी संपादक : आचार्य सतीश
सम्पर्क सूत्र: 9350945482
Web: www.aryanirmatrisabha.com
E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com

ओ३म्

राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

ऋषि दयानन्द

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

स पूर्वया निविदा कव्यतायोरिमा: प्रजा अजनयन् मनूनाम्। विवस्वता चक्षसा द्यामपश्च देवा अग्निं धारयन् द्रविणोदाम् ॥ –ऋ० १। ७। ३। २

व्याख्यान–हे मनुष्यो! सो ही (पूर्वया निविदा) आदि सनातन, सत्यता आदि गुणयुक्त अग्नि परमात्मा था, अन्य कोई नहीं था। तब सृष्टि के आदि में स्वप्रकाशस्वरूप एक ईश्वर प्रजा की उत्पत्ति की ईक्षणता (विचार) [करता भया। (कव्यतायोरिमा:) सर्वज्ञतादि सामर्थ्य से ही सत्यविद्यायुक्त वेदों की, तथा (मनूनाम्) मननशीलवाले मनुष्यों की, तथा अन्य पशुवृक्षादि की (प्रजा:) प्रजा को (अजनयत्) उत्पन्न किया, परस्पर मनुष्य और पशु आदि के व्यवहार चलने के लिए। परन्तु मननशीलवाले मनुष्यों को अवश्य स्तुति करने योग्य वही है। (विवस्वता चक्षसा) सूर्यादि तेजस्वी सब पदार्थों का प्रकाशनेवाला, अपने बल से स्वर्ग (सुखविशेष) सब लोक [अप:। अन्तरिक्ष में पृथिव्यादि मध्यमलोक] और निकृष्ट दु:ख विशेष नरक और सब दृश्यमान तारे आदि लोक उसी ने रचे हैं। जो ऐसा सच्चिदानन्दस्वरूप परमेश्वर देव है, उसी (द्रविणोदाम्) विज्ञानादि धन देनेवाले को ही (देवा:) विद्वान् लोग अग्नि जानते हैं। हम लोग उसी को ही भजें ।।४२।।

सम्पादकीय

"आर्यावर्त्त ही भारत है"

यह सत्य है कि इस धरा पर सैकड़ों देश बने हैं, बिगडे हैं, मिटे हैं, पुन: उज्जीवित हुए हैं, कुछ टूटकर सम्भले हैं, तो कुछ बिखरे हुए एक हुए हैं। परिवर्तन संसार का नियम है और सृष्टि ही परिवर्तनशील है, तब देशों के इतिहास एवं भूगोल में परिवर्तन अवश्यम्भावी है। हमारे इस सनातन राष्ट्र में भी करोड़ों वर्षों के सुदीर्घ कालखण्ड में अनेक अद्भुत विस्मयकारी परिवर्तन समय-समय पर देखने को मिलते रहे हैं। इन सुदीर्घकालीन परिवर्तनों में जहाँ एक ओर कुछ परिवर्तनों के फलस्वरूप सभी देशवासियों का मस्तक लम्बे समय तक गौरव से समुन्नत रहा है, तो कुछ थोड़े कालखण्ड में अवनति की भयंकर खाई में पड़कर शीस झुकाए क्रूर अत्याचारियों के अत्याचारों से रोते-बिलखते-सिसकते हुए भी संघर्ष के मार्ग पर बढ़ते रहे हैं। हमारे विद्या-विचार, आचार, व्यवहार, गुण, कर्म, स्वभाव जब तक ऊर्ध्वगामी रहे, परस्पर विश्वास और संगठन रहा, तब तक हम सभी **चतुवर्णो (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) चतुराश्रमों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास) एवं चार पुरुषार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष)** से समन्वित जीवन पथ पर प्रेय एवं श्रेय के लिए बढ़ते रहे। और यह निश्चित है कि- किसी भी देश में सभी प्रकार के परिवर्तन सर्वप्रथम विचारों पर आश्रित होते हैं, चाहे देश का रहन-सहन हो, खान-पान हो, वेश-भूषा हो, आचार-व्यवहार हो और चाहे जीवन-निर्वाह के लिए आजीविका (रोजगार)। इतना ही नहीं, देश की राजनीति (शासन व्यवस्था), देश के शत्रु-मित्र, देश की सीमाएं, देश की सेनाएं आदि-आदि सभी का मूल तो 'विचार' ही होता है। साथ ही यह भी एक अकाट्य सिद्धान्त है कि विचारों का सर्वश्रेष्ठ वाहक यदि कुछ है, तो वह है **'शब्द'**। व्याकरण महाभारत में ऋषि पतंजलि ने कहा भी है- **"एक: शब्द: सम्यग्ज्ञात: सुप्रयुक्त: स्वर्गे लोके कामधुक् भवति"**। और इतना ही नहीं सम्पूर्ण व्याकरण शास्त्र को शब्द शास्त्र ही कहते हैं, इस शास्त्र का आविष्कार ही ऋषियों ने साधु (शुद्ध), असाधु (अशुद्ध) शब्दज्ञान के लिए ही किया है, इसीलिए हमारे पूर्वज शब्दों का बड़ा ही ध्यान रखते थे। सृष्टि के प्रारम्भ में परमपिता परमात्मा प्रदत्त-वेदों में उपदिष्ट शब्दराशी में से ही भिन्न-भिन्न स्थान, पर्वत, नदी, प्रान्तदेशादि को नाम प्रदान किये। हमारे महान पूर्वज ऋषि-मुनियों ने हम सभी को नाम की महिमा भी बतलाई और गर्भाधान से अन्त्येष्टि-पर्यन्त् जब षोड्श संस्कारों का विधान किया तब **'नामकरण'** भी एक संस्कार निश्चित किया, जो आज भी आर्यजनों के घरों पर सन्तान प्राप्ति के उपरान्त सम्पन्न किया जाता है। माता-पिता अपने सन्तानों को सार्थक एवं उद्देश्यपरक नाम रखकर धन्यता का अनुभव करते हैं,

शेष अगले पृष्ठ पर ....

सम्पादकीय का शेष ....

ऐसे ही सृष्टि के प्रारम्भ काल में ही हमारे श्रेष्ठ पूर्वजों ने अपने इस सनातन देश को भी एक नाम प्रदान किया, जो नाम था- **''आर्यावर्त्त''**। सृष्टि के प्रारम्भ से महाभारत युद्ध के काल तक इस एक ही नाम से हमारा देश जाना जाता रहा, कालान्तर में चक्रवर्त्ती सम्राट भरत के वंशजों की प्रबलता और लगभग एक छत्र शासन के सुदीर्घकाल तक चलने पर इस देश का नाम 'भारत' पड़ा। जो कि इस देश में मुसलमानों के आगमन से पूर्व तक व्यापकरूप से स्थिर रहा, मुसलमानों के आगमन के पश्चात् हमारी श्रेष्ठ परम्पराएं, श्रेष्ठ जीवन-मूल्य, श्रेष्ठ विद्या-विचार ही नष्ट नहीं किये गये, अपितु जो कुछ भी गौरव का बोध कराने वाले प्रतीक थे, चिह्न थे, नाम थे, धाम थे, वे सभी एक-एक कर नष्ट कर डाले गये और इसी के साथ इस देश के निवासी जो आर्य एवं भारतीय नाम से जाने जाते थे, उन पर **''हिन्दू''** अपमान जनक नाम थोप दिया गया और जब निवासी हिन्दू कहलाने लगे तब देश का नाम हिन्दुस्तान हो गया, कर दिया गया। अंग्रेज आये तब इंडियन और इंडिया बना दिया गया, किन्तु दुर्भाग्य तो यह है कि- स्वतन्त्रता के बहत्तर वर्ष बाद भी हम गुलामी के सूचक इंडिया और हिन्दुस्तान जैसे हीन नामों को ढ़ो रहे हैं, अब कुछ लोग मांग कर हैं कि ''इंडिया'' को हटाया जाए, इसके स्थान पर 'हिन्दुस्तान' किया जाए, तब हम कहते हैं कि यह तो ऐसे ही हुआ कि- **कुएं से निकले और खाई में गिरे**''। एक कम समय तक गुलाम बनाने वाले की गुलामी छुटवायी और लम्बे समय तक गुलाम बनाने वालों की गुलामी गले गला ली। अत: हम सभी को इस विषय में साफ-साफ रहना होगा और एक ध्वनि से एक नाम का उद्घोष करना होगा- **''आर्यावर्त्त''**। अर्थात् **''आर्यावर्त्त ही भारत है''** था, और रहेगा। **''जय आर्यावर्त्त''**

गृहस्थ सम्बन्ध : भाग-११

-आचार्य संजीव आर्य, मु०नगर,

ऋषि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास के अन्त में लिखते हैं- जो गृहाश्रम की निन्दा करता है वही निन्दनीय है और जो प्रशंसा करता है वहीं प्रशंसनीय है। परन्तु तभी गृहाश्रम में सुख होता है जब स्त्री और पुरुष दोनों परस्पर प्रसन्न, विद्वान्, पुरुषार्थी और सब प्रकार के व्यवहारों के ज्ञाता हों। इसलिए गृहाश्रम के सुख का मुख्य कारण ब्रह्मचार्य और पूर्वोक्त स्वयंवर विवाह है।

आज गृहाश्रम में इतनी त्रुटियाँ आ गई हैं कि इसे दु:ख का घर ही बना दिया है। परन्तु फिर भी गृहाश्रम निन्दनीय नहीं अपितु आवश्यकता उसे ठीक-ठीक रूप में स्थापित करने की है। जहाँ छोटे परिवारों में एकाकी पल रहे पुत्र-पुत्रियां ऐसे स्वभाव वाले हो जाते हैं कि वे दूसरे को सह ही नहीं पाते। समाज भी उन्हें संभालने में असमर्थ होता जा रहा है। भले ही इनकी भाषा प्राञ्जल एवं सुमधुर हो अथवा नगरीय प्रभाव से युक्त होकर औपचारिक प्रबन्धनों से सजी-धजी हो परन्तु वास्तविकता यह है कि ये व्यवहार नहीं जानते। जानेंगे भी कैसे? क्योंकि व्यवहार बताने वाला कोई है ही नहीं। जहाँ विद्वान चिन्तक मौन की साधना पर हों और कथावाचक, वाचालजन धर्म गुरुओं की पदवी पा गये हों। तब चेले-चेलियों से युक्त समाज की, विशेषत: गृहाश्रमियों की दुर्दशा निश्चित ही है। ऋषियों ने एक सुदृढ़ एवं सुस्पष्ट व्यवस्था का निर्माण किया था हमें उसके पालन की आवश्यकता है।

ऋषियों की व्यवस्था का ही एक भाग है- विवाह संस्कार। कन्या गृह से वधू-वर की विदाई के साथ ही यह समाप्त नहीं हो जाता किन्तु यह अभी वर गृह में पहुंचने पर इसका शेष भाग चलेगा- ऋषि दयानन्द संस्कार विधि में निर्देश करते हैं कि जब वधू-वर का रथ वर के घर आगे आ पहुंचे, तब कुलीन पुत्रवती सौभाग्यवती, कोई ब्राह्मणी, वा अपने कुल की स्त्री आगे सामने आकर वधू का हाथ पकड़ के वर के साथ रथ से नीचे उतारे और वर के साथ-साथ मण्डप में ले जावे। सभा मण्डप द्वारे आते ही वर वहाँ कार्यार्थ आये हुवे लोगों की ओर अवलोकन कर के वर-

सुमङ्गलीरिपं वधूरिमां समेत पश्यत। सौभाग्यमस्यै दत्वायाथास्तं वि परेतन।

इस मंत्र को बोले और आये हुवे लोग- **ओं सौभाग्यमस्तु। ओं शुभं भवतु।।**

इस प्रकार आशीर्वाद देवें-

क्या सुन्दर व्यवस्था है स्वागत की? जब कोई अति विशेष व्यक्ति आता है तब उसके स्वागत की व्यवस्था में कोई न्यूनता नहीं रखी जाती है। और यह तो वर की जीवन संगिनी हैं, अर्धांगिंनी है अत: स्वागत तो विशेष होना ही है। यह प्रक्रिया तो आज विवाह पर है परन्तु व्यवहार जीवनभर के लिए सीखना है। ध्यान रखना होगा। एक दूसरे के मन का सम्मान का और उसमें कोई कमी नहीं करनी है।

वधू का स्वागत करा आशीर्वाद दिलवा कर, वर उसे सभा मण्डप की ओर ले चलता है और मन्त्र के माध्यम से अपनी भावना को भी वह व्यवक्त कर रहा है। उसके मन में जो संशय होंगे, जो भय होगा, उसे दूर करने को भी उसकी आस्वस्ति की आवश्यकता तो है

वह ऋषियों की योजना व ईश्वरादेश के अनुसार कहता है-

ओम् इह प्रियं प्रजया ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि।
एना पत्या तन्वं सं सृजस्वाऽधा जिव्री विदथमा वदाथ:।।

अर्थात् हे वधू! यहाँ इस मेरे घर में तेरा कल्याण और सुख अथवा वही हो जो तुझे प्रिय है। तू यहाँ सन्तान के साथ समृद्धि को प्राप्त हो। इस घर में गृहाश्रम के कर्त्तव्यों के लिए जागरूक बनी रहना। हम शरीर से एक साथ रहते हुवे संसार के व्यवहारों को करते रहेंगे, अपने घर में जो वृद्ध हैं उनसे हम बड़े प्रेम से व्यवहार करें। ऋषियों की योजना व्यवहार सिखाने की है। प्रथम पति और उसके परिवार को चाहिए कि अपना व्यवहार ऐसा बनावे जिससे वधू को घर प्रिय और अपना लगने लगे। उसकी वृद्धि, वहां की समृद्धि उसे अपनी लगे। यह भावना गृहस्थ के अनेकों व्यवहारों का आधार बनेगी। दूसरा यह पति उसे ऐसी प्रेरणा करे कि जिससे वह गृहस्थ के कर्त्तव्यों का निर्वाह जागरूक रह स्वकर्त्तव्य मान उत्साहपूर्वक करे, भार स्वरूप न समझे। शारीरिक व्यवहारों के साथ-साथ वाग्-व्यवहार अर्थात् वाणी के व्यवहार को भी समझे एवं घर के बड़ों से मधुर वाणी से वर्ता करें।

सामान्यतया छोटे लगने वाले ये व्यवहार बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। साथ ही उतने कोमल भी कि सावधानी हटते ही इनके उलटने का संकट खड़ा रहता है।

क्रमश ....

सहज सरल सांख्य-१

-आर्य सतीश, दिल्ली

सामान्य भौतिक सुखों के लिए किया जानेवाला प्रयत्न पुरुषार्थ कहलाता है। लेकिन शास्त्रों में वर्णित तीनों प्रकार के दुखों से मुक्ति अथवा मोक्ष के लिए किया जानेवाला प्रयत्न परम पुरुषार्थ कहलाता है और यही मानव जीवन का प्रयोजन अर्थात् लक्ष्य भी है।

दुःख निवृत्ति के लिए लोक में एक तो साधारण लौकिक धनादि का अर्जन तथा दूसरा उपाय लोगों द्वारा वैदिक यज्ञ-याग आदि का अनुष्ठान किया जाता है। लेकिन इन उपायों से प्राप्त साधनों के होते हुए भी पूर्णतः दुःख से निवृति नहीं होती, फिर भी लोग धन आदि के अर्जन के लिए पुरुषार्थ क्यों करते हैं?

शास्त्रकार कहता है कि प्रतिदिन भूख लगती है फिर भी हम उसकी निवृत्ति के लिए अन्न आदि का प्रयोग व प्राप्ति प्रतिदिन करते हैं। लोक में धन हमारी अनेक आवश्यकताओं को पूरा करता है चाहे किसी अंश तक ही लोभ की स्थिति में धनादि अर्जन की महती उपयोगिता हो, क्योंकि इससे होने वाली आवश्यकता की पूर्ति के बाद ही जिज्ञासु अत्यंत पुरुषार्थ की प्राप्ति को आत्मचिंतन में प्रवृत्त होता है। अतः सांख्यकार लौकिक संसाधनों की उपेक्षा नहीं करता।

जो अलौकिक उपाय हैं वह सब देश काल परिस्थिति में संभव नहीं, इसलिए दुखों की वास्तविक निवृत्ति के लिए यह उपाय अधूरे हैं, पूरे त्याज्य भी नहीं। वेद भी मोक्ष की शुद्धता का प्रतिपादन करता है अतः उसके लिए यत्न करना आवश्यक है उसी के लिए यह शास्त्र है।

फिर प्रश्न उठता है कि त्रिविध दुःख की अत्यंत निवृत्ति लौकिक उपायों से नहीं हो सकती, लेकिन वेद प्रतिपाद्य यज्ञ-याग आदि से तो हो जाएगी? लेकिन जिस प्रकार लौकिक धन आदि साधनों से दुःख की अत्यंत निवृत्ति नहीं हो सकती उसी प्रकार केवल यज्ञ-याग आदि के अनुष्ठान से भी नहीं हो सकती।

फिर इनकी आवश्यकता क्या है?

यज्ञादि का अनुष्ठान अंतःकरण की शुद्धि द्वारा विवेकज्ञान में सहायक अवश्य है पर वह मोक्ष का साक्षात् उपाय नहीं। उसका उपाय तो विवेक ज्ञान है। परंतु विवेक ज्ञान होने तक शुभ कर्मों का अनुष्ठान करते रहना आवश्यक है क्योंकि शुद्ध अंतःकरण मुमुक्षु ही अध्यात्म की ओर प्रवृत्त होता है, अतः यह उपकारक है। अब द्रव्यार्जन व यज्ञ याग आदि वैदिक काम्य कर्म मोक्ष में वास्तविक उपाय नहीं और विवेकज्ञान की सिद्धि ही मोक्ष या मुक्ति के लिए आवश्यक है, ऐसा निश्चित होता है।

लेकिन मुक्ति उसी की हो सकती है जो बंध में पड़ा है। इसलिए पहले आत्मा के बंधन की स्थिति को समझा जाए। क्या आत्मा स्वभाव से बंधन में है? शास्त्रकार कहता है यदि आत्मा को स्वभाव से बद्ध माना जाए तो उसके मुक्ति के लिए किन्हीं साधनों की आवश्यकता ही नहीं, युक्त ही नहीं। क्योंकि किसी भी वस्तु के स्वभाव को हटाया नहीं जा सकता। वस्तु का स्वभाव उसका अपना रूप है, अपना आत्मा है, स्वभाव के हटने से वस्तु के स्वरूप का ही अस्तित्व नहीं रहेगा, जैसे उष्णता के हटने से अग्नि का अस्तित्व नहीं रहता तो आत्मा को स्वभाव से बद्ध मानने से उसकी मुक्ति का उपदेश ही निष्फल है।

लेकिन शिष्य प्रश्न करता है कि जिस प्रकार श्वेत वस्त्र में श्वेत रूप स्वाभाविक है और उस पर दूसरा रंग चढ़ाकर उसकी श्वेतता को समाप्त कर दिया जाता है, जैसे बीज में अंकुर जननशक्ति स्वाभाविक है और उसको अग्नि संयोग से हटा दिया जाता है, इसी प्रकार आत्मा स्वभाव से बद्ध होते हुए भी उसे विवेक ज्ञान से हटाया जा सकता है।

लेकिन उपरोक्त उपायों से वस्तु के धर्म का तिरोभाव हो जाता है सर्वथा नाश नहीं होता। जैसे वस्त्र को विधिपूर्वक प्रक्षालन से पुनः श्वेत किया जा सकता है और वैज्ञानिक उपायों द्वारा पुनः बीच में वह अविर्भाव हो जाता है, या फिर वस्तु ही समाप्त हो जाती है तो फिर वह उपाय किसके लिए?

तो आत्मा का बंध नैमित्तिक है और अगर नैमित्तिक है तो उसके बंध का निमित्त क्या है? काल, देश, अवस्था, कर्म या अन्य कुछ।

अब काल को यदि आत्मा के बंध का निमित्त मानें तो प्रश्न उठता है कि आत्मा की सत्ता तो सब काल में रहती है। काल से तो तभी बंध माना जा सकता है जब कोई वस्तु कभी हो कभी ना हो। काल और आत्मा तो सर्व काल में हैं, फिर तो वह कभी मुक्त ही ना हो अतः काल आत्मा के बंध का निमित्त नहीं है।

तो क्या देश आत्मा के बंध का कारण है?

नित्य गतिशील होने से हमेशा किसी न किसी देश के साथ संबंध होने से क्या देश आत्मा के बंध का कारण हो सकता है? यदि देश से बंध मानें तो मोक्ष में भी आत्मा को बंधन में मानना पड़ेगा क्योंकि मोक्ष में भी आत्मा किसी न किसी देश में ही रहती है।

फिर प्रश्न उठता है कि क्या अवस्था आत्मा के बंधन का निमित्त है?

वास्तव में अवस्था देह का धर्म है आत्मा के साथ उसका कोई संबंध नहीं। बाल्य, युवा, वृद्ध, जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, स्थूल, कृश, सबल, दुर्बल आदि अवस्थाएं देह का धर्म हैं। अवस्था का अभिप्राय परिणाम भी है और परिणामी प्रकृति है चेतन आत्मा नहीं। यदि परिणाम धर्म आत्मा का भी मान लिया जाए तो? परिणाम संघात में रहता है जबकि आत्मा असंग है उसका कोई संघात नहीं, अतः आत्मा परिणामी नहीं हो सकती। अतः अवस्था भी आत्मा से बंध का निमित्त नहीं है।

फिर तो शुभ-अशुभ कर्मों को ही आत्मा के बंध का निमित्त माना जाना चाहिए।

लेकिन विहित और निषिद्ध कर्मों का करना सुख-दुख की प्राप्ति अंतःकरण और देह के अनंतर ही होते हैं और यह संबंध ही बंध का रूप है, तो फिर अनंतर होने वाला कर्म अपने से पहले होने वाले बंध का निमित्त कैसे हो सकता है?

अब प्रश्न उठता है कि क्या प्रकृति ही आत्मा के बंध का निमित्त है?

लेकिन प्रकृति स्वयं परतंत्र है, वह अपने प्रेरियता चेतन अधिष्ठाता की प्रेरणा के बिना प्रवृत्त नहीं हो सकती। यदि प्रकृति की स्वतः आत्मा को बंध करने की प्रवृत्ति मानी जाए तो प्रलय अवस्था में भी यह प्रवृत्ति हो और सर्ग-प्रलय रहे ही नहीं। प्रकृति चेतन अधिष्ठाता के अधीन है उसकी प्रेरणा से सर्ग-प्रलय होते हैं, अतः प्रकृति स्वतः आत्मा के बंध का कारण नहीं कही जा सकती।

लेकिन आत्मा प्रकृति के संपर्क में आने से बंधन में पड़ जाता है और यह प्रकृति योग आत्मा का अविवेक के कारण से होता है। सारांश यह है कि आत्मा अविवेक के कारण प्रकृति के संपर्क में आता है और बंधन में पड़ जाता है। अविवेक अर्थात् अपने चेतन स्वरूप को साक्षात्कार रूप में अचेतन प्रकृति से पृथक न जानना। **अतः अविवेक निमित्तक प्रकृति योग आत्मा के बंध का वास्तविक कारण है, ऐसा सांख्यकार का मत है।**

क्रमश ....

वर्ण व्यवस्थाः डॉ. अम्बेडकर बनाम वैदिक मत

-सोनू आर्य, हरसौला

प्रत्येक देश की अपनी विशिष्ट संस्कृति होती है, जो सम्बद्ध देश की सामाजिक, राजनीतिक व्यवस्था को विशिष्टता प्रदान करती है। संस्कृति एक व्यापक अवधारणा है जिसमे अनेक तत्व शामिल हैं। इसके कुछ तत्व सम्बंधित देश की राजनीतिक व्यवस्था को न केवल प्रभावित करते हैं अपितु राजनीतिक व्यवस्था से प्रभावित होते हैं। जिसने भारतीय सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था को निरन्तर गहराई से प्रभावित किया है, ऐसा एक प्रमुख तत्व है- अतीत की वर्ण व्यवस्था एवं वर्तमान की जाति व्यवस्था।

भारतीय राजनीति में जाति का प्रभाव इतना अधिक रहा है कि इस विषय पर व्यापक साहित्य रचा जा चुका है। अतः जो तत्व इतना महत्वपूर्ण व प्रभावशाली रहा है, उसका विश्लेषण विज्ञापनों हेतु अत्यावश्यक ही नहीं अपरिहार्य भी है। वर्ण एवं जाति विषय पर भारत में मुख्यतः दो विचारधाराएं (विचार समुदाय) पाएं जाते हैं। जिनमें एक वैदिक विचार तथा दूसरा डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा है। एक तीसरा मत भी कहा जा सकता है, वह है पौराणिकों का मत। किन्तु सुखद तो यह कि जो तार्किक व प्रमाणिक बातें पौराणिक उठाते हैं उनका मूल वैदिक विचारधारा ही है। दूसरा बहुत सी वेद-विरूद्ध, अतार्किक बातें जो पौराणिकों में है जिनका वर्णन डॉ. अम्बेडकर ने भी किया है, का विश्लेषण डॉ. अम्बेडकर के पक्षवालों के प्रत्युत्तर में ही जाएगा। तीसरा अधिकतर इतिहासकार पुराणों को अप्रमाणिक व इतिहास की श्रेणी में नहीं मानते। अतः प्रस्तुत विश्लेषण में हम दो मतों पर ही विचार करेंगे। महान दार्शनिक जीओएफ हेगल के निषेधों का निषेध के अनुसार जब दो परस्पर विरोधी विचारों में टकराव होता है, तो टकराव के परिणामस्वरूप उनका असत्य अंश नष्ट हो जाता है व सत्य शेष रहता है। प्रस्तुत विषय में भी दोनों विचारधाराओं के अतार्किक, समय व परिस्थिति बाह्य विचारों को छोड़कर, शेष सत्य को प्राप्त हो हमारा उद्देश्य है।

वर्ण व्यवस्थाः- उत्पत्तिः मूल/विशुद्ध स्वरूप- हिन्दी साहित्य में प्रयुक्त तन-मन-धन और जन शब्द समुच्चय भारत की नहीं, सम्पूर्ण विश्व की समग्र व्यवस्था को स्वयं में समाहित करने वाला सार्थक शब्द है। स्व संस्कृति के श्रेष्ठ शिल्पकारों ने सुचारू रूप से समाज संचालन हेतु चातुर्वर्ण्य व्यवस्था को अपनाया था। सर्वप्रथम ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में इसका वर्णन/उत्पत्ति इस प्रकार बतलाई गई है-

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद बाहु राजन्यः कृतः।
उरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥

-यजुर्वेद ३१/११

अर्थात्:- ब्राह्मण ईश्वर के मुख से, क्षत्रिय बाहु से, वैश्य उरु से, शूद्र पगों से उत्पन्न हुआ है। विचारणीय है कि-

''जब ईश्वर (वेदानुसार) निराकार है, तो उसके मुखादि अंग नहीं हो सकते''

- सत्यार्थ प्रकाश चतुर्थ समुल्लास

इसलिए इसका अर्थ है कि जो व्यापक परमात्मा की सृष्टि में मुख के सदृश सब में मुख्य उत्तम हो वह ब्राह्मण, बल वीर्य का नाम बाहु है वह जिसमें अधिक हो सो क्षत्रिय, कोटि के अधो और जानु के उपस्थित भाग का नाम है, जो सब पदार्थो और सब देशों में उरु के बल से आवे/प्रवेश करे वह वैश्य और जो पग के अर्थात् नीचे अंग के सदृष मुर्खत्वादि गुणवाला हो वह शुद्र है।

अब वर्ण व्यवस्था की शरीर से उपमा को थोड़ा और आगे बढ़ाते हैं। जिस प्रकार शरीर का सम्पूर्ण भार पांव ढोते हैं, किन्तु उन्हें कांटा लगे या अन्य कष्ट हो तो आंसू आंख में आता है, जो मुख का भाग है। फिर उसे निकालने का कार्य भुजाएँ करती हैं। अतः जैसे शरीर में इनमें से किसी भी अंग के बीमार अथवा नष्ट होने से शरीर में विकलांगता आती है, उसी भांति समाज में भी चारों वर्णों मे से किसी को भी शोषित/उपेक्षित रखने से सामाजिक विकलांगता की स्थिति भी अवश्य आएगी। अतः निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि वेदोक्त वर्ण व्यवस्था को मानने वाला कोई भी विद्वान सामाजिक विकलांगता का पक्षधर नहीं होगा। यह विचार चारों वर्णों के महत्व को स्पष्ट रूप से स्वीकारता है। चारों वर्णों को हम क्रमशः शिक्षक, रक्षक, पोषक व सेवक कह सकते हैं। अज्ञानांधकार को मिटाने हेतु शिक्षक, समाज व्यवस्था के विकारकों से रक्षा हेतु रक्षक, रोटी-कपड़ा व मकान की व्यवस्था हेतु पोषक व जो इनमें से कोई कार्य न कर सके, वह बाकी तीनों के सेवा का कार्य संभाले। अर्थात् समाज में मुख्यतः तीन प्रतिभाएं पाई जाती है, बौद्धिक (मन का प्रतिनिधि ब्राह्मण), समाज रक्षक क्षत्रिय (तन का प्रतिनिधि), पोषक (वैश्य-धन का प्रतिनिधि)। जीवन जीने के लिए स्वस्थ मन, स्वस्थ तन तथा धन तीनों आवश्यक हैं। किन्तु तीनों के पश्चात् भी यदि व्यक्ति के पास समय न हो तो भी वह सुखी न रह सकेगा। अतः तीनों के अलावा इनके अतिरिक्त बचे कामों को करके इन्हें समय प्रदान करने वाला सेवक (जन) भी अत्यावश्यक है। आप सोचिए वर्तमान में वैज्ञानिक, व्यापारी के पास यदि चिन्तन हेतु समय ही न हो तो क्या वह समाजोपयोगी अनुसंधान व व्यापार कर पाएगा? अतः तीनों वर्ण (तन-मन-धन) के अलावा समाज व्यवस्था में सेवक की महत्ता भी स्वयंसिद्ध हैं।

आधुनिक राजनीति का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त जो अंशतः वर्ण

शेष अगले पृष्ठ पर ....

पिछले पृष्ठ का शेष ....

व्यवस्था के सदृश्य है किन्तु समाज में केवल दो वर्णों का अस्तित्व मानता है। विशिष्ट जन या अभिजन वर्ग तथा जनसाधारण। इसे राजनीति का विशिष्ट वर्गवादी सिद्धान्त कहा जाता है। बिल्फ्रेड परैटो ने इसके अन्तर्गत विशिष्ठिवर्गों की अदला-बदली का विचार दिया जिसके अनुसार अपने प्रमाद-आलस्य इत्यादि के कारण कालान्तर में विशिष्ट वर्ग अपनी वांछित योग्यता को खोकर जनसाधारण में व जनसाधारण अपने पुरुषार्थ आदि गुणों के कारण विशिष्ट वर्ग में परिवर्तित हो जाता है। यानि योग्यतानुसार वर्गों की अदली-बदली का सिद्धान्त मान्य है। वर्ण-व्यवस्था की उत्पत्ति व उपयोगिता विश्लेषण के बाद विचारणीय प्रश्न यह है कि तथा वर्ण व्यवस्था में भी योग्यतानुसार वर्ण परिवर्तन सम्भव था। क्या वर्ण परिवर्तन हेतु वांछित योग्यता अर्जित करने हेतु उन्हें पर्याप्त सामाजिक व शैक्षणिक अधिकार थे? डॉ. अम्बेडकर के मतानुसार एक समय तक (वैदिक विचारकों के अनुसार संभवत महाभारत युद्ध के आस-पास) शूद्र का उपनयन संस्कार किया जाता था। उन्होंने शूद्र को सवर्ण माना है। प्रारम्भ में शूद्र क्षत्रिय वर्ण था जो बाद में शूद्र हो गया। इसके साथ-साथ अपने ग्रन्थों में डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दुत्व तथा वैदिक साहित्य पर अनेक आक्षेप भी किए हैं। अत: उपरोक्त बिन्दु कि- क्या वर्ण परिवर्तन का अधिकार वैदिक व्यवस्था में है? पर विचार हेतु हम अपने अध्ययन को दो भोगों में बांटकर विवेचन करते हैं- 1. महाभारत पूर्व तक की व्यवस्था, 2. महाभारत बाद की व्यवस्था।

1. महाभारत पूर्व तक की व्यवस्था:- यहां हम वेद से लेकर महाभारत पर्यन्त ग्रन्थों का प्रमाण लेकर जानने का प्रयत्न करेंगे कि महाभारत के युद्ध के कुछ समय पूर्व तक वर्ण व्यवस्था का क्या स्वरूप रहा है।

हे परमात्मन, मेरी ब्राह्मण, क्षत्रियों, वैश्यों, शूद्रों में सदा प्रीति बनी रहे। मुझमे प्रेमभाव को सुदृढ़ कीजिए।

-यजुर्वेद -१८/४८

मुझे ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों, शूद्रों का प्रियपात्र बनाओ

- यजुर्वेद १९/६२/१

ब्राह्मणाय धर्नुवेदयं खंड्ग व क्षत्रियाय च ॥
वैश्याय दाषयेत्कुन्त गदा शूद्राम दापयेत ॥ ८॥

- वाशिष्टी धनुर्वेद संहिता

अर्थ:- ब्राह्मण को धनुवेद, क्षत्रिय को तलवार, वैश्य को भाला और शूद्र को गदायुद्ध सीखावे ।।8।।

आचारहीन मनुष्य का उत्तम कुल में उत्पन्न होना, उसकी श्रेष्ठता में उसके कुलीन होने का प्रमाण नहीं है। यह मेरा दृढ़ निश्चय है। शूद्र कुल में उत्पन्न हुए की भी आचार के कारण विशिष्ठता होती है।

-विदुरनीति 41

तुम्हें क्या? तुम क्यों परेशान होते हो?

-आर्य अमनदीप, कैथल

मनुष्य की प्रवृत्ति है कि वह उन्हीं घटनाओं पर सर्वप्रथम प्रतिक्रिया करता हैं जो उससे सीधी जुड़ी हों। मनुष्य चाहता है कि वह सुखी रहे, सुरक्षित रहे। परन्तु अनेक बार ऐसा होता है कि इस आत्मकेन्द्रित भावना में मनुष्य इस तरह डूब जाता है कि उसे अनुमान ही नहीं लग पाता कि कब उसके अस्तिव पर प्रश्न चिह्न लग गया है। भविष्य की संभावनाओं या आकांशाओं के प्रति मनुष्य की उदासीनता उसे विनाश की ओर लेकर चली जाती है। इस आत्मकेन्द्रित सोच एवं एक दायरे की सीमा में जीने वाला मनुष्य स्वयं को कभी पूर्णत: राष्ट्र एवं धर्म से सही मायनों में कभी जोड़ नहीं पाता। आज हम इसी आधार पर हमारे प्यारे राष्ट्र आर्यावर्त्त, जिसे कि अब भारत कहा जाता है, के इतिहास एवं वर्तमान की चर्चा करते हुए भविष्य की तलाश करने का प्रयत्न करेंगे। आज की स्थिति से हर व्यक्ति परिचित है- ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। भले ही आज संचार तकनीकी ने कितनी ही प्रगति कर ली हो, चाहे आज कहीं भी कुछ भी जानना सरल हो गया हो फिर भी दुर्भाग्य इस राष्ट्र का यह है कि जो राष्ट्र को संभाल सकता है, संरक्षित कर सकता है, सशक्त कर सकता है, वह युवा आज भी राष्ट्र की अवधारणा की समझ से मीलों दूर है। आप और हम यदि इस बात का प्रमाण पाना चाहते हैं तो उन युवक-युवतियों से मिलना-बातचीत करना जिनकी आयु 18 से 40 वर्ष है। उनसे पूछना वे प्रश्न जो जीवन की यर्थाथता से जुड़े हैं,

उनसे पूछना किसी बड़ी से बड़ी घटनापर वे क्या करते हैं। उनकी पाठ्य पुस्तकों की दुनिया से बाहर की दुनिया का उन्हें कुछ भी पता नहीं है। मनोरंजन की दुनिया से ज्यादा कुछ जानने में दिलचस्पी नहीं है। उन्हें धन एवं धनोपार्जन के माध्यम-नौकरी, व्यापार आदि से ज्यादा जानने मे कोई रूचि नहीं है। जो धन की व्यावस्था कर चुके हैं अर्थात् नौकरी प्राप्त कर चुके हैं, व्यापार चला रहे हैं उन्हें उससे और अपने परिवार से ज्यादा किसी के सुख-दुख, उन्नति-पतन से कोई सरोकर नहीं है। क्या यह हकीकत नहीं है? और

शेष अगले पृष्ठ पर ....

पिछले पृष्ठ का शेष ....

ये आज से नहीं है। इस देश के नागरिकों ने प्रतिक्रिया देना छोड़ दिया है। इस देश के लोगों ने ही नहीं, नेताओं, विद्वानों ने यह प्रतिक्रिया देना छोड़ दिया है और यह तब से है जब महाभारत काल में भरी सभा में एक स्त्री का अपमान हुआ था और अपनी अपनी निष्ठाओं के नीचे दबे वे 'महापुरुष' दर्शक मात्र बन गए थे। ये तब से है जब से योग्यता एवं सामर्थ्य होते हुए भी तथा महाविनाश रूपी परिणाम को जानते हुए भी वे 'महापुरुष' 'महाभारत युद्ध' को रोकने के लिए अपनी अपनी आत्मकेन्द्रित निष्ठाओं से बाहर नहीं आ सके। यह क्रम जारी रहा। हे भारत के नागरिक मैं तुम्हें सम्बोधित करके अब कहना चाहता हूँ कि वर्तमान स्थिति के लिए क्या तुम उत्तरदायी नहीं हो।

तुम उस समय भी विरोध नहीं कर पाए थे जब विदेशी आक्रान्ता इस भूमि को पदाक्रान्त कर रहे थे। सिकन्दर के आक्रमण पर भी तुम नहीं जागे। शक, हूण, कुषाण आक्रमण पर तुम केवल आत्मकेन्द्रित बने रहे। आपस में ही लडते रहे, तब कुछ हजार सैनिक लेकर मोहम्मद गजनी तुम्हारे देवी-देवताओं की प्रतिमा को तोड़कर सब लूटता रहा, तुम तब भी यूं ही सोते रहे। तुम्हें तब भी होश नहीं आया जब हजारों हजार स्त्रियां घसीट-घसीट कर बाजरों में ले जाकर बेची गयी, उनकी पीड़ा की चीखें भी तुम्हे सुनाई नहीं दी। आज तुम स्वतन्त्रता, अभिव्यक्ति की आजादी का राग अलापते हो उस समय तुम्हारा साहस कहाँ गया था, जब 700 वर्ष मलेच्छ इस राष्ट्र को असहनीय पीड़ा देते रहे? मलेच्छों से लड़ना तो दूर की बात रही अपनी बेटियों को मलेच्छों को देते तुम्हें लज्जा नहीं आई? जब महाराणा प्रताप जैसे शूरवीर स्वाभिमान का युद्ध लड़ रहे थे तब उन मुगलों के साथ सन्धि करते तुम्हे लज्जा नहीं आई? कहाँ चला गया था तुम्हारा स्वाभिमान जब तुम्हे उन मलेच्छों के नवरत्नों में अपना नाम लिखवाने में भी लज्जा नहीं आई?

जब अंग्रेज इस राष्ट्र का सामाजिक आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक शोषण कर रहे थे तब उनकी सेना में भर्ती होकर अपने राष्ट्र के लोगों का रक्त बहाकर तुम्हे किस गर्व का अनुभव हुआ? आज स्वतन्त्रता, निजता की बात करने वाले है मेरे युवा! तुम भगत सिंह, चन्द्रशेख आजाद, रामप्रसाद, लाजपत राय जैसे सैकड़ों लोग तुम्हारे लिए संघर्ष कर रहे थे तुम तो तब भी उनका साथ नहीं दे पाए थे। जब देश का विभाजन हुआ और लाखों लोग अपना जीवन नहीं बचा पाए तब तुम क्या आत्मकेन्द्रित नहीं रहे थे? स्वतन्त्रता के पश्चात भी जब तुम्हारे ही देश में तुम्हारे ही लोग प्रतिदिन तुम्हारी महान सांस्कृतिक विरासत को मिटाने में दिनरात लगे हुए हैं तब भी तुम समझ नहीं पाते कि तुम क्या खो रहे हो? जब तुम्हारे ही बालक श्रीराम, श्रीकृष्ण को काल्पनिक पात्र बनाकर उनका उपहास करते हैं तो तुम कुछ कह नहीं पाते क्योंकि न तुम्हें सच्चाई का सही ज्ञान है और न ही इसमें कोई रूचि। तुम्हारी रूचि तो बस अपनी संतान को धन उत्पन्न करने की मशीन बनाने में है। तुम्हारे पुत्र उसके दादा जी का सम्मान करें या अपमान तुम्हें तो बस धन चाहिए, मान चाहिए और चाहिए कि पड़ोसी आपको कहें- वाह श्रीमान जी आपका लड़का बहुत कमाता है, बड़ी नौकरी प्राप्त कर ली, वाह। अब तुम्हारे ही देश में लाखों लोग अपना घर छोडें तो तुम्हें क्या? करोड़ों भूखे सोयें तुम्हें क्या? युवा नशा करें तुम्हें क्या? वेब सीरीज बनाकर कोई कुछ दिखाये-तुम्हें कोई दिक्कत नहीं। देश में कोई भी बड़ी से बड़ी घटना हो जाए तुम्हारे पास निपटने का बस एक ही ब्रह्मास्त्र है- रात को मोमबत्ती लेकर निकलना, नारे लगाना और अगली घटना तक आराम से सो जाना, जो राष्ट्र कभी ईरान, अफगानिस्तान से बर्मा तक व्यापक था आज टुकड़े-टुकड़े हो गया है और जो बचा है उसमें उस राष्ट्र के जैसी कोई बात शेष नहीं है। आज देश में इसकी संस्कृति, आध्यात्म, भाषा के सम्मान के अतिरिक्त सबका सम्मान है। देश के युवा को टोपी पहनकर सड़कों पर जाम लगाकर नमाज पढ़ना किसी की आस्था से जुड़ा निजी मामला लगता है परन्तु अग्निहोत्र करना तो पाखंड है। वाह! क्या सोच विकसित की जा रही है। राष्ट्रभक्ति, धार्मिकता तो पुराने जमाने की बात है। और सर्वाधिक प्रसन्नता तो तुम्हें तबब मिलती होगी जब कोई लड़की भाग जाती है मुल्ले के साथ और इस्लाम स्वीकार कर लेती है। ये तो उसका निजी मामला है, ये करते करते आज तुम अपना अस्तित्व मिटाने में बढ़-चढ़कर योगदान दे रहे हो और आश्चर्य की बात तो ये है कि तुम समझने-समझाने की सारी सीमा पार कर चुके हो। कोई तुम्हें समझाए तो तुम्हारा उत्तर स्पष्ट होता है-

''तुम्हें क्या? तुम क्यों परेशान होते हो?''

संध्या काल

आषाढ़-मास, वर्षा-ऋतु, कलि-5121, वि. 2077
(06 जून 2020 से 5 जुलाई 2020)
प्रातः कालः 5 बजकर 15 मिनट से (5.15 A.M.)
सांय कालः 7 बजकर 15 मिनट से (7.15 P.M.)

श्रावण-मास, वर्षा-ऋतु, कलि-5121, वि. 2077
(06 जुलाई 2020 से 3 अगस्त 2020)
प्रातः कालः 5 बजकर 30 मिनट से (5.30 A.M.)
सांय कालः 7 बजकर 00 मिनट से (7.00 P.M.)

गौकरुणानिधिः - गौ आदि पशुओं की रक्षा के लिये ऋषि का संदेश

ऋषि दयानन्द ने वेद के सिद्धान्तों को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए अन्य कार्यों के साथ-साथ एक पूर्णकालिक लेखक के रूप में भी अनेकों ग्रन्थों की रचना की है। उन्होंने विशुद्ध व्याकरण के ग्रन्थों से लेकर वेदभाष्य तक व सत्यार्थ प्रकाश जैसे कालजयी ग्रन्थ से लेकर गायादि पशुओं की रक्षा व उपयोगिता के लिए गौकरुणानिधि जैसी सामान्य जन के लिए भी अत्यन्त उपयोगी पुस्तकों की रचना की है। ऋषि ने इस पुस्तक में गायादि पशुओं के पूरे अर्थशास्त्र को, उनकी उपयोगिता को दर्शाया है तथा समीक्षा भाग में मांसाहार व मद्यपान आदि की निस्सारता व हानियों को दर्शया हैं। वहीं दूसरी ओर नियमादि देकर कृषि तथा पशुओं की उन्नति का मार्ग प्रदर्शित किया है।

यहाँ प्रस्तुत है गौकरुणानिधि पुस्तक, आईये इसका स्वाध्याय करते हैं। ध्यान से पढ़ें तथा विचार करें कि यदि हम ऋषि के बताए अनुसार गायादि पशुओं की रक्षा करते हैं, उनका उपयोग लेते हैं तो न केवल पूरे राष्ट्र को अपितु एक एक व्यक्ति व एक एक परिवार स्मृद्धि को प्राप्त हो सकता है। यही मार्ग हमारी आर्थिक उन्नति का मूल है तथा इसको अपनाकर हम पाप से भी बच सकते हैं।

॥ ओ३म्॥

अथ गोकरुणानिधिः

[गोकृष्यादिरक्षिणीसभा]

[१] अथ समीक्षा-प्रकरणम्

इस सभा का नाम **'गोकृष्यादिरक्षिणीसभा'** इसलिए रक्खा है, जिससे गवादि पशु और कृष्यादि कर्मों की रक्षा और वृद्धि होकर सब प्रकार के उत्तम सुख मनुष्यादि प्राणियों को प्राप्त होते हैं, और इसके विना निम्नलिखित सुख कभी प्राप्त नहीं हो सकते-

सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ने इस सृष्टि में जो-जो पदार्थ बनाये हैं, वे निष्प्रयोजन नहीं। किन्तु एक-एक वस्तु अनेक-अनेक प्रयोजन के लिए रचा है। इसलिए उनसे वे ही प्रयोजन लेना न्याय है, अन्यथा अन्याय है। देखिये, जिसलिए यह नेत्र बनाया है, इससे वही कार्य लेना सबको उचित होता है, न कि उससे पूर्ण प्रयोजन न लेकर बीच ही में वह नष्ट कर दिया जावे। क्या जिन-जिन प्रयोजनों के लिये परमात्मा ने जो-जो पदार्थ बनाये हैं, उन-उन से वे-वे प्रयोजन न लेकर उनको प्रथम ही विनष्ट कर देना सत्पुरुषों के विचार में बुरा कर्म नहीं है? पक्षपात छोड़कर देखिए, गाय आदि पशु और कृषि आदि कर्मों से सब संसार को असंख्य सुख प्राप्त होते हैं, वा नहीं? जैसे दो और दो चार, वैसे ही सत्यविद्या से जो-जो विषय जाने जाते हैं, वे अन्यथा कभी नहीं हो सकते।

जो एक गाय न्यून-से-न्यून दो सेर दूध देती हो, और दूसरी बीस सेर, तो प्रत्येक गाय के ग्यारह सेर दूध होने में कुछ भी शंका नहीं, इस हिसाब से एक मास में सवा आठ मन दूध होता है। एक गाय कम-से-कम ६ महीने, और दूसरी अधिक-से-अधिक १८ महीने तक दूध देती है। तो दोनों का मध्यभाग प्रत्येक गाय का दूध देने में बारह महीने होते हैं। इस हिसाब से बारह महीनों का दूध निन्नानवे मन होता है।

इतने दूध को औंटाकर प्रति सेर में एक छटांक चावल और डेढ़ छटांक चीनी डालकर खीर बनाकर खावें, तो प्रत्येक पुरुष के लिए दो सेर दूध की खीर पुष्कल होती है। क्योंकि यह भी एक मध्यभाग की गिनती है। अर्थात् कोई दो सेर दूध की खीर से अधिक खाएगा और कोई न्यून। इस हिसाब से एक प्रसूता गाय के दूध से १,९८० एक हज़ार नवसौ अस्सी मनुष्य एक बार तृप्त होते हैं। गाय न्यून-से-न्यून आठ और अधिक-से-अधिक अठ्ठारह बार ब्याती है, इसका मध्यभाग तेरह बार आया। तो २५,७४० पच्चीस हजार सातसौ चालीस मनुष्य एक गाय के जन्मभर के दूधमात्र से एक बार तृप्त हो सकते हैं।

इस गाय के एक पीढ़ी में छः बछिया और सात बछड़े हुए । इनमें से एक का मृत्यु रोगादि से होना सम्भव है, तो भी बारह रहे। उन छः बछियाओं के दूधमात्र से उक्त प्रकार १,५४,४४० एक लाख चौवन हज़ार चार सौ चालीस मनुष्यों का पालन हो सकता है। अब रहे छः बैल, उन में एक जोड़ी से २०० दो सौ मन अन्न उत्पन्न हो सकता है। इस प्रकार तीन जोड़ी ६०० छः सौ मन अन्न उत्पन्न कर सकती हैं, और उनके कार्य का मध्यभाग आठ वर्ष है। इस हिसाब से ४८०० चार हजार आठ सौ मन अन्न उत्पन्न करने कि शक्ति एक जन्म में तीनों जोड़ी की है।

४८०० मन अन्न से प्रत्येक मनुष्य का तीन पाव अन्न भोजन में गिनें, तो २,५६,००० दो लाख छप्पन हजार मनुष्यों का एक बार भोजन होता है। दूध और अन्न मिलाकर देखने से निश्चय है कि ४,१०,४४० चार लाख दस हजार चार सौ चालीस मनुष्यों का पालन एक बार के भोजन से होता है। अब छः गाय की पीढ़ी-पर-पीढ़ियों का हिसाब लगाकर देखा जावे, तो असंख्य मनुष्यों का पालन हो सकता है। और इसके मांस से अनुमान है की केवल अस्सी मांसाहारी मनुष्य एक बार तृप्त हो सकते हैं। देखो, तुच्छ लाभ के लिए लाखों प्राणियों को मार असंख्य मनुष्यों की हानि करना महापाप क्यों नहीं?

यद्यपि गाय के दूध से भैंस का दूध कुछ अधिक, और बैलों से भैंसा कुछ न्यून लाभ पहुँचाता है, तथापि जितना गाय के दूध और बैलों के उपयोग से मनुष्य को सुखों का लाभ होता है, उतना भैंसियों के दूध और भैंस से नहीं। क्योंकि जितने आरोग्यकारक और बुद्धिवर्धक आदि गुण गाय के दूध में और बैलों से होते हैं, उतने भैंस के दूध और भैंसें आदि से नहीं हो सकते, इसलिए आर्यों ने गाय सर्वोत्तम मानी है।

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	21 जून	दिन-रविवार	मास-आषाढ़	ऋतु-वर्षा	नक्षत्र-मृगशिरा
पूर्णिमा	05 जुलाई	दिन-रविवार	मास-आषाढ़	ऋतु-वर्षा	नक्षत्र-पूर्वाषाढ़ा
अमावस्या	20 जुलाई	दिन-सोमवार	मास-श्रावण	ऋतु-वर्षा	नक्षत्र-पुनर्वसु
पूर्णिमा	03 अगस्त	दिन-शुक्रवार	मास-श्रावण	ऋतु-वर्षा	नक्षत्र-उत्तराषाढ़ा

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आयोजित दो दिवसीय सत्रों व सभा से सम्बन्धित नवीन जानकारी सभा की बेवसाईट-

www.aryanirmatrisabha.com

पर उपलब्ध है। अतः आप वहाँ से जानकारी ले सकते हैं। यह पत्रिका भी प्रत्येक मास दिनांक 10 को सभा की बेवसाईट पर डाल दी जाती है अतः पत्रिका को पढ़ने के लिए साईट के लिंक www.aryanirmatrisabha.com/हिन्दी में पत्रिका पर जाएं।

6 जून-5 जुलाई 2020 आषाढ़ ऋतु- वर्षा

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
					ज्येष्ठा कृष्ण प्रतिपदा 6 जून	मूल कृष्ण द्वितीया 7 जून
पूर्वाषाढ़ा कृष्ण तृतीया 8 जून	उत्तराषाढ़ा कृष्ण चतुर्थी 9 जून	श्रवण कृष्ण पंचमी 10 जून	धनिष्ठा कृष्ण षष्ठी 11 जून	शतभिषा कृष्ण सप्तमी 12 जून	पूर्वाभाद्रपदा कृष्ण अष्टमी 13 जून	उत्तराभाद्रपदा कृष्ण नवमी 14 जून
रेवती कृष्ण दशमी 15 जून	अश्विनी कृष्ण एकादशी 16 जून	अश्विनी कृष्ण एकादशी 17 जून	भरणी कृष्ण द्वादशी 18 जून	कृत्तिका कृष्ण त्रयोदशी 19 जून	रोहिणी कृष्ण चतुर्दशी 20 जून	मृगशिरा कृष्ण अमावस्या 21 जून
आर्द्रा शुक्ल प्रतिपदा 22 जून	पुनर्वसु शुक्ल द्वितीया 23 जून	पुष्य शुक्ल तृतीया 24 जून	आश्लेषा शुक्ल चतुर्थी 25 जून	मघा शुक्ल पंचमी/षष्ठी 26 जून	पू० फाल्गुनी शुक्ल सप्तमी 27 जून	उ० फाल्गुनी शुक्ल अष्टमी 28 जून
हस्त/चित्रा शुक्ल नवमी 29 जून	स्वाति शुक्ल दशमी 30 जून	विशाखा शुक्ल एकादशी 1 जुलाई	अनुराधा शुक्ल द्वादशी 2 जुलाई	ज्येष्ठा शुक्ल त्रयोदशी 3 जुलाई	मूल शुक्ल चतुर्दशी 4 जुलाई	पूर्वाषाढ़ा शुक्ल पूर्णिमा 5 जुलाई

6 जुलाई- 3 अगस्त 2020 श्रावण ऋतु- वर्षा

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
उत्तराषाढ़ा कृष्ण प्रतिपदा 6 जुलाई	श्रवण कृष्ण द्वितीया 7 जुलाई	धनिष्ठा कृष्ण तृतीया 8 जुलाई	शतभिषा कृष्ण चतुर्थी 9 जुलाई	पूर्वाभाद्रपदा कृष्ण पंचमी 10 जुलाई	उत्तराभाद्रपदा कृष्ण षष्ठी 11 जुलाई	उत्तराभाद्रपदा कृष्ण सप्तमी 12 जुलाई
रेवती कृष्ण अष्टमी 13 जुलाई	अश्विनी कृष्ण नवमी 14 जुलाई	भरणी कृष्ण दशमी 15 जुलाई	कृत्तिका कृष्ण एकादशी 16 जुलाई	रोहिणी कृष्ण द्वादशी 17 जुलाई	मृगशिरा कृष्ण त्रयोदशी 18 जुलाई	आर्द्रा कृष्ण चतुर्दशी 19 जुलाई
पुनर्वसु कृष्ण अमावस्या 20 जुलाई	पुष्य शुक्ल प्रतिपदा 21 जुलाई	आश्लेषा शुक्ल द्वितीया 22 जुलाई	मघा शुक्ल तृतीया 23 जुलाई	पू० फाल्गुनी शुक्ल चतुर्थी 24 जुलाई	उ० फाल्गुनी शुक्ल पंचमी 25 जुलाई	हस्त शुक्ल षष्ठी 26 जुलाई
चित्रा शुक्ल सप्तमी/अष्टमी 27 जुलाई	स्वाति शुक्ल नवमी 28 जुलाई	विशाखा शुक्ल दशमी 29 जुलाई	अनुराधा शुक्ल एकादशी 30 जुलाई	ज्येष्ठा शुक्ल द्वादशी 31 जुलाई	मूल शुक्ल त्रयोदशी 1 अगस्त	पूर्वाषाढ़ा शुक्ल चतुर्दशी 2 अगस्त
उत्तराषाढ़ा शुक्ल पूर्णिमा 3 अगस्त					उपाकर्म पर्व 3 अगस्त	

हमारे देश का नाम क्या....?

-अनिल आर्य, भिवानी

नमस्ते साथियों!

साथियों आज हमारे देश के लोगों की देशभक्ति में कुछ नारे, कुछ शब्द बहुत बड़े सामान्य रूप ले चुकें हैं जैसे कि- **I LOVE MY INDIA, I PROUD TO BE AN INDIAN** इत्यादि। पर हमारे देश की देशभक्त सरकारें हमें समय समय पर बताती रही हैं कि यह **INDIA** शब्द हमें, हमारी उस समय की गुलामी की याद दिलाता है, जब कभी हम अंग्रेजों के गुलाम थे, ये देश अंग्रेजों का डोमिनियन स्टेट था। इसलिए हमें अपने देश के संविधान के अनुच्छेद-०१ की पहली पंक्ति **INDIA that is BHARAT** में से हमें **INDIA** शब्द को हटा देना चाहिए और **INDIA** के स्थान पर **HINDUSTAN that is BHART** कर हमारे संविधान में संशोधन कर देना चाहिए। और २०२० में इस मुद्दे को सुप्रीम कोर्ट में **PIL** लगाकर उठाने वाले व्यक्ति का नाम है नमः। सुप्रीम कोर्ट ने **PIL** कर्ता की **PIL** को खारिज करते हुए उतर दिया कि **INDIA** हटाना है या नहीं यह राज्य सरकारें स्वयं तय करें।

वहीं जब २६ जनवरी १९५० को देश में संविधान देश लागू किया गया था उससे ८ दिन पहले एक बड़ी बहस हुई थी और उस बहस में एच.बी. कामथ, सेठ गोबिंद दास आदि कई लोगों का कहना था कि **INDIA that is BHARAT** नहीं **HINDUSTAN that is BHART** होना चाहिए पर जब इसके ऊपर वोटिंग हुई तो वह लोग वोटिंग में हार जाते हैं और **INDIA that is BHARAT** ही स्थापित हो जाता है जोकि आज तक चला आ रहा है। भारत के संविधान से **INDIA** हटना चाहिए इस बात का मैं व्यक्तिगत रूप से भी समर्थन करता हूँ क्योंकि आज भी इस देश में देश के सबसे बड़े पुरुस्कार को भारत रत्न कहा जाता न कि इंडिया रत्न, राष्ट्रीय गान में कहा जाता भारत भाग्य विधाता न कि इंडिया भाग्य विधाता, महात्मा गांधी ने भी नारा दिया- भारत माता की जय न कि इंडिया माता की जय। इसी मुद्दे को मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने भी उठाया था जब वह २०१४ में **pvt- Member bill** (प्राइवेट मेम्बर बिल) लेकर आये थे। और वह कह रहे थे कि **HINDUSTAN that is BHART** होना चाहिए। पर मैं व्यक्तिगत रूप से व पूरे देश वासियों से कहता हूँ कि हमें इस बात का पुरजोर विरोध करना होगा, क्योंकि जिस प्रकार इंडिया शब्द अंग्रेजों की गुलामी का प्रतीक है ठीक वैसे ही हिंदुस्तान शब्द भी तो हमें बार बार मुस्लिम आक्रान्ताओं की १००० साल के भयावह आक्रमणों व उनकी दास्ता की याद दिलाता ह। क्या ८०० साल तक हमारा देश मुगलों का डोमिनियन स्टेट नहीं रहा? तो हिंदुस्तान नाम कैसे उचित हो सकता है। ऐसे में हमारे देश के शीर्ष के नेताओं में **HINDUSTAN that is BHART** को स्वीकार करना आज भी उसी मानसिक गुलामी को प्रदर्शित करता है कि उनकी संकीर्ण बुद्धि में आज भी यही है कि हिंदुस्तान से पहले न तो यह देश न ही इसका कोई नाम था। और दुःख इस बात का है कि ये राजनेता ये २०० साल की गुलामी को तो गुलामी मानते हैं १००० सालों की गुलामी नहीं अपना गौरव मानते हैं।

लेकिन यही नेता जब वोट मांगने आर्य समाजों में आतें हैं तो इस देश के इतिहास को रामायण काल का कहते हैं, महाभारत काल का कहते हैं, अपने को ऋषियों की संतान कहते हैं, वेद को अपना आदि मूल कहते हैं और इतना ही नहीं रामायण व महाभारत आदि के बड़े बड़े वचनों का प्रमाण भी देते हैं। पर पूरी रामायण में, पूरी महाभारत में, पूरे वैदिक वांग्मय में हमें हिंदुस्तान शब्द एक बार भी नहीं मिलता, जबकि आर्यावर्त व आर्यावर्त में रहने वाले लोग आर्य हैं इसके एक- दो नहीं सैकड़ों प्रमाण हम देख-पढ़ सकते हैं। पर विडंबना देखो ये संकीर्ण मानसिकता के राजनेता व उनके ही समर्थक **AARYAVART that is BHARAT** की तो मांग ही नहीं कर रहे जोकि उनके गौरवपूर्ण इतिहास की याद उनको दिलाता है।

मैं इस लेख के माध्यम से सभी आर्यों को, आर्यों की संतानों से कहना चाहता हूँ कि हम सभी को बड़े स्तर का अभियान चलाकर देश के इन राजनेताओं पर दबाव बनाना होगा कि तुम राजनेता अपने देश का गौरवशाली इतिहास नहीं जानते तो क्या? हम जानते हैं और हम इसको **(ARYAAVART that is BHARAT)** को स्थापित भी करेंगे और ये इसलिए और भी जरूरी है क्योंकि मिट जाया करते हैं वह लोग, वह राष्ट्र जो अपने मूल/इतिहास को नहीं जानते हैं और यही बात हमें स्वराज्य शब्द देने वाले, महान विचारक, वेदोद्धारकर्ता महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने भी कही, कि हम इसके सिद्धांतों की, गौरवशाली इतिहास की तो क्या रक्षा करेंगे जब हम इस इस देश के नाम की भी रक्षा नहीं कर पाए।

तो आओ हम सभी मिलकर इस देश में व्यापक रूप से एक अभियान चलावें जिसका सूत्र होगा **ARYAVART that is BHART**, हम इस सूत्र को ट्विटर पर, फेसबुक पर, अखबरों में, खबरों में चलावें व चलवावें और इस अभियान को सफल करें। इस राष्ट्र के कम से कम नाम की तो रक्षा कर लेवें। धन्यवाद!